आनन्द प्रबोध

व्याख्याता

अनन्तश्रीस्वामी अखण्डानन्द सरस्वतीजी महाराज

(1)

संन्यास जयन्ती के उपलक्ष्य में

त्वदीय वस्तु गोविन्द !
तुभ्यमेव समर्पयेत।

ꕥꕥꕥ

श्री सुरेन्द्र भाई शाह, बड़ौदा के सौजन्य से
आनन्द प्रस्तुति ऑडियो विजुअल सेन्टर
आनन्द वृन्दावन, वृन्दावन
द्वारा
वितरणार्थ प्रकाशित

हरिको भजे सो हरि का होई

भजन क्या है ? **'भजनं नाम रसनम्'** –भजन माने स्वाद लेना। जैसे आप भगवान् के बारेमें सुनते हैं– यमुनाजीका तट है, बालुकामय पुलिन है, मोर नाच रहे हैं, पक्षी चहक रहे हैं, गौयें पानी पीनेके लिए जा रही हैं और उनके पीछे–पीछे ग्वाल–बालोंके संग बाँसुरी बजाते हुए, नाचते हुए

श्रीकृष्ण जा रहे हैं– तो ये बातें आपने सत्संगमें, भगवान्‌की कथामें सुनी और फिर गये घर और वहाँ जानेके बाद बारम्बार वे सुनी हुई बातें आपके स्मृति–पटपर आने लगीं। सुनी तो थी सत्संगमें और उसका एक संस्कार हृदयमें पड़ गया और अब निकाल–निकालकर उसका आनन्द लेते हैं।

तो ये जो सुनी हुई और देखी हुई कथा और लीलाको पुनः–पुनः दुहरा करके उसका मजा लेना, स्वाद लेना भजन है।

‘भजनं नाम रसनम्,
भजनं नाम आस्वादनम्।’

भजन माने रसानुभूति– याद करके मजा लेना। इसका दृष्टान्त ऐसे भी देते हैं– जैसे गाय, बैल पहले घास–फूस खा लेते हैं। गलेके नीचे चला जाता है, पेटमें चला जाता है और फिर उसको लौटा–लौटा करके अपने मुँहमें लाते हैं और उसको चुगलते हैं, चर्वण करते हैं (साहित्यिक लोग चर्वण शब्दका प्रयोग करते हैं, उनके यहाँ चर्वणा होती है– चर्वणा माने जुगाली

करना), पागुर करते हैं (गाँवमें पागुर बोलते हैं), वैसे ही भगवान्‌की जो लीला देखी हुई है और सुनी हुई है, उसको मनमें पुनः–पुनः ला–लाकर उसका रसास्वादन करनेका नाम भजन है।

भजनका अर्थ है– प्रीति–पूर्वक सेवा। प्रीति होती है मनमें, तो बाहर चाहे हाथसे पूजा करें, चाहे पाँवसे प्रदक्षिणा करें, चाहे जीभसे स्तुति करें, चाहे साष्टाङ्ग दण्डवत् करें और चाहे मनमें ध्यान करें। हमारी जो प्रीति है, प्रीति माने तृप्ति– यह जो हम

जगह–जगहसे रसास्वादन लेते हैं, तृप्ति लेते हैं, उसकी जगह पर हमारी प्रीति, हमारी तृप्ति भगवान्‌के नाम, धाम, रूप, भगवान्‌की लीला, भगवान्‌की सेवा, भगवान्‌के दर्शनमें होनी चाहिए। भगवान्‌के नाममें जो रसास्वादन है– उसको भजन कहते हैं। श्रीवल्लभाचार्यजी महाराजने तो 'भजनानन्द' को विषयानन्द, उपासनानन्द, ज्ञानानन्द और ब्रह्मानन्द, सबसे विलक्षण माना है।

संस्कृतकी यह 'भज' धातु बड़ी विलक्षण है। भजन माताका भी होता है, पिताका भी होता है, पतिका भी होता है, पुत्रका भी होता है, देशका भी होता है, जातिका भी होता है। जहाँ हम प्रीति–विशिष्ट सेवा करेंगे, प्रेमसे तृप्त होते हुए, रस लेते हुए– केवल नेगचारके लिए नहीं, केवल हुकुम माननेके लिए नहीं–जहाँ हम अपने रससे घोल–घोल करके किसी पदार्थका सेवन करेंगे– उसका नाम भजन हो जाता है। और, इस भजनानन्दके विषयमें तो

ऐसा बोलते हैं कि ब्रह्मानन्दमें केवल शान्ति है रसास्वादन नहीं है; विषयानन्दमें पराधीनता है और योगानन्दमें अभ्यासका कष्ट है। लेकिन यह जो भजनानन्द है– इसमें न शांति है, न विधि है और न ही अभ्यास है।

इसमें तो अपने प्यारेके लिए रोना ही भजन है; दूर होनेपर उसका जो चिन्तन होता है– वह भी भजन है; पास रहनेपर जो स्पर्श होता है– वह भी भजन है। वह जो चिढ़ाता है, कुढ़ता है, काटता है, पीटता

है– वह भी भजन है। और जब प्यार–दुलार करता है, तब भी भजन है। उसको सबमें मजा आता है, सबमें स्वाद आता है। जिसके हृदयमें प्रीतिका भाव आ गया, उसको एक घासको प्यार करते समय भी भजनानन्द होगा। मिट्टीको प्यार करते समय भी भजनानन्दका अनुभव होगा और वह जिसको छूयेगा, उसमें भी भजनका आनन्द भरेगा; जिसको देखेगा उसको भी आनन्दमय कर देगा; जिसको सूँघेगा वहाँ भी उसकी साँसमें–से आनन्द–ही–आनन्द फैलेगा।

उसकी वाणीमें–से आनन्द विस्तीर्ण होगा। उसके शरीरमें–से जो तन्मात्राएँ छूटेंगी, वे भी परमानन्दमय होंगी। यह भजन केवल एक व्यक्तिको नहीं, बल्कि समस्त सृष्टिको तृप्तिमय, रसमय, परमानन्दमय बनानेके लिए है। यह भजन जिसके जीवनमें आ जाता है, वह कृतार्थ हो जाता है। वहाँ दुःखका लेश नहीं रहता है, दुःख भी वहाँ सुख रूप हो जाता है, परमानन्द हो जाता है : ऐसा यह भजन है : **मद्भक्तियुक्तो भुवनं पुनाति।**

चलिये तो !

ईश्वरकी अपरोक्ष अनुभूति करनेके लिए हमें क्या करना चाहिए ? कृपया समझायें !

पहले ईश्वरका एक चित्र अपने घरमें रखिये और आँखसे उसको प्रत्यक्ष देखिये, उसके बाद आँख बन्द करके अपने हृदयमें अपरोक्ष देखिये। आँख बन्द करनेपर जो

चित्र आपके हृदयमें दिखेगा, वह घड़े–कपड़ेके समान वजनदार भी नहीं होगा और स्वर्गके समान परोक्ष भी नहीं होगा। तो, आप चित्रके रूपमें भगवान्को अपने हृदयमें अपरोक्ष कीजिये और उसीको साक्षात् भगवान् मानकर कि ये जो चित्रके रूपमें भगवान् दीख रहे हैं– यह देखो कैसे हँस रहे हैं, कैसे मेरे सिरपर हाथ रख रहे हैं, कैसे मुझे अपनी बाँहोंमें भरकर छातीसे लगा रहे हैं– खुश होइये। भगवान् यह सब देखकर बहुत खुश होते हैं और

वे फिर सोचते हैं, जो मेरे चित्रसे इतना प्रेम करता है, वह मुझे कितना प्रेम करेगा– तो इसके लिए तो केवल चित्रमें ही नहीं रहना चाहिए, इसके पास तो स्वयं चलना चाहिए और वे उसके सामने प्रकट हो जाते हैं।

तो, जो भगवान्‌के चित्रसे, मूर्त्तिसे प्रेम करता है, उसकी सेवा करता है– उसको स्नान कराता है, वस्त्र पहनाता है, चन्दन लगाता है, भोग लगाता है, आरती

उतारता है, न्यौछावर होता है– उसको भगवान् पहले चित्रमें प्रवेश करके चित्र–रूपमें मिलते हैं और फिर कहते हैं कि लो, अब मैंने चित्र हटा दिया, अब मैं स्वयं तुमको मिल रहा हूँ! यदि आप भगवान्‌के चित्रका, भगवान्‌की मूर्त्तिका अनादर करेंगे, भगवान्‌के नामका अनादर करेंगे; उसको हटा देंगे, उसको लेना छोड़ देंगे तो भगवान् आपके पास नहीं आयेंगे। अतः भगवान्‌का अपरोक्ष साक्षात्कार करनेके लिए, पहले आप उनका प्रत्यक्ष

साक्षात्कार चित्रमें, मूर्त्तिमें कीजिये और बादमें आप देखेंगे कि आपको भगवान्‌का अपरोक्ष साक्षात्कार हो रहा है।

भगवान् करुणा–वरुणालय हैं। वे किसीका त्याग तो कर ही नहीं सकते और हर समय अपने चाहनेवालोंके विरहमें दु:खी होते रहते हैं। देखो, श्रीमद्‌भागवतमें आया है कि जब रुक्मिणीका सन्देश लेकर ब्राह्मण देवता श्रीकृष्णके पास गये और उन्होंने उनको बताया कि रुक्मिणी उनके

लिए कितनी व्याकुल है और उसने प्रतिज्ञा की है कि यदि इस जीवनमें वे नहीं मिलेंगे, तो कोई बात नहीं है, मैं सौ–सौ जन्म लूँगी, तपस्या करूँगी और उनको प्राप्त करके ही छोड़ूँगी। सुनकर श्रीकृष्णकी आँखोंमें आँसू आ गये! उन्होंने कहा– 'ब्राह्मण देवता, आपको क्या बताऊँ ? मेरा मन रुक्मिणीमें ऐसा लग गया है कि मुझे रातको नींद नहीं आती, सारी रात मैं तारे गिन–गिनकर बिताता हूँ। **'निद्रां च न लभे निशि '** जब भक्त भगवान्‌के प्रेममें

मग्न होता है तब भगवान् भी भक्तके प्रेममें मग्न हो जाते हैं।

जब सुदामाको प्रभुने गलेसे लगाया तो उनकी आँखोंसे झर–झर आँसू बहने लगे और–

पानी परात को हाथ छुओ नहीं,
नयनन के जल तें पग धोए।

इसलिए, यदि आप भगवान्‌का अपरोक्ष दर्शन चाहते हैं, तो पहले अपनी आँखोंमें भगवान्‌को भरिये, अपनी भावनामें

भगवान्को भरिये, अपने हृदयमें भगवान्को भरिये– इस तरह कि आपको संसारकी जगह भगवान् दीखने लगें, स्त्री, पुत्रकी जगह भगवान् दीखने लगें। तब आप देखेंगे कि भगवान् स्वयं आकर आपसे ऐसा मिलते हैं, इस तरहका व्यवहार करते हैं कि जिसमें कभी परोक्षता रहती ही नहीं। एकबार ज्योति चमक गयी और अज्ञानका सारा पर्दा दूर हो गया। **'तमसस्परस्तात्'**– जो ज्योति है– उस परब्रह्म परमात्माका साक्षात् अपरोक्ष हो जायेगा। आप पहले गुरुके

अनुसार, शास्त्रके अनुसार चलिये तो सही ! पूजा तो कीजिये, ध्यान तो कीजिये, नाम तो लीजिये। पहले ही दिन आकर भगवान् आपको अपने हाथसे लड्डू खिलायें– ऐसा क्यों सोचते हैं ? धीरे–धीरे सब होगा– आप चलिये तो!

●●●

एक कप चाय : एक पावरोटी

पाकिस्तान बननेसे कुछ वर्ष पहले लाहौरमें एक सज्जन रहते थे। योग्यता अच्छी थी, परन्तु कोई काम नहीं मिल रहा था। कभी–कभी कुछ खानेको मिल जाता। ऐसा समय आया कि लगातार कई दिन तक खानेको कुछ न मिल सका। दिनभर काम की तलाश करते–करते थककर

पेटमें ऐंठन होने लगी। साहस करके एक होटलमें घुस गये। एक कप चाय मँगायी और एक पावरोटी। खा–पीकर चुपचाप चले आये। बिल चुकानेके लिए पैसा था ही नहीं। कई दिनतक लगातार ऐसा ही किया। सेवक (वेटर) ने होटलके मालिकसे कहा। वे बड़े सहृदयतासे बोले कि बिचारेकी कोई विवशता होगी, तुम कुछ मत बोला करो। वे सज्जन महीने–दो–महीने तक प्रतिदिन आते रहे। खा–पीकर चले जाते थे। अन्ततः उन्हें काम मिल गया।

दूसरे शहरमें चले गये। दस–पन्द्रह वर्ष हो गये उन्होंने लाखों रुपये कमाये। किसी कामसे लाहौर आनेका अवसर प्राप्त हुआ।

चाय पीने के लिए वे उसी होटलकी ओर गये। यह क्या ? वहाँ तो कोई था ही नहीं। होटलमें ताला बन्द था। पता लगाकर होटलके मालिकके घर गये। मालिकने बताया कि हमारी पूँजी होटलमें लगी थी, वह समाप्त हो गयी। अब हमारे पास पैसे नहीं है, इसलिए बन्द कर देना पड़ा। उस सज्जनने कहा कि निश्चय ही अब आपको

स्मरण नहीं होगा। मैं वही व्यक्ति हूँ, जो आपके होटलमें एक कप चाय और एक पावरोटी खाकर बिल नहीं चुकाया करता था। अब मैं इस संकल्पसे आया हूँ– यदि मैं आपकी कुछ सेवा कर सकूँ तो अपनेको धन्य मानूँगा। मालिकके मना करनेपर भी पचास हजार रुपये रखकर वह व्यक्ति चुपचाप चला गया।

हम विचार करते हैं कि दोनोंकी मानवता एवं सहृदयता कितनी उच्च–

कोटिकी थी कि एकने गरीबोंकी सेवाके लिए अपनी सारी पूँजी लुटा दी; दूसरा वह था जो वर्षों बीत जानेपर भी अपने उपकार करनेवालेको नहीं भूला।

मनुष्यके हृदयमें नारायणका निवास है।

●●●

सहानुभूतिका चमत्कार

आजसे २५–३० वर्ष पहलेकी बात है, एक बड़े नगरमें युवा दम्पती थे। पति–पत्नी दोनोंकी उम्र २५–३० वर्षके अन्दर ही होगी। पत्नी अपने श्वसुरसे और पति अपने पितासे दुःखी रहा करते थे। समस्या मेरे सामने आयी। क्या बात है भाई!

दोनोंने मुझे बताया कि जब रातके समय हम कमरेमें सोते हैं, परस्पर बातचीत करते हैं, तो पिताजी बाहरसे आकर खिड़कीमें कान लगा लेते हैं और चुपके–चुपके हमारी प्रेमकी बातें सुनते हैं। कभी कमरेमें रोशनी रह जाय तो सबकुछ देखते हैं। अब हमलोग वहाँ रहें या हम अलग रहें।

पिताजीकी पत्नी २–४ वर्ष पहले मर चुकी थी। वे अकेले थे। रातको उन्हें नींद

नहीं आती तो सचमुच ही वैसा करते थे। अकेलापन बुढ़ापेमें बहुत खलता है।

मैंने दम्पतीसे पूछा— 'तुमलोग कभी उनके पास बैठते हो ? कुछ सलाह लेते हो ? उनका सुख–दुःख समझनेका प्रयास करते हो ?

'मुझे तो व्यापारके कामसे अवकाश ही नहीं मिलता है'— पतिने कहा।

'मुझे उनका मुँह देखनेका मन नहीं होता'— पत्नीका जवाब था।

मैंने दोनोंसे कहा कि तुम दोनों घरके कामसे छुट्टी पाकर थोड़ी देर पिताजीके पास बैठा करो। पत्नी उनके पाँवपर हाथ फिरावे और उनसे तुम सलाह लिया करो। व्यापारकी, परिवारकी, उनके जवानीके अनुभव पूछा करो। घण्टा–आधा घण्टा उनके लिए भी निकालो।

उन लोगोंने वैसा ही किया। थोड़े ही दिनोंमें उनके घरका वातावरण प्रेम और सेवासे भरपूर हो गया। पिताको एकान्तमें

सूना–सूना लगता था। पत्नी न होनेके कारण उन्हें सहानुभूतिकी आवश्यकता थी। वे भी किसीसे प्यार भरी बातें करना और सुनना चाहते थे। आखिर वे भी तो एक मनुष्य थे। इस मानसिक अभावके कारण ही वे चोरी छिपे पुत्र एवं पुत्रवधूकी बातें सुनने, देखने लगे थे। अब वह अभाव मिट गया, सद्भावका वातावरण बन गया। पिता मरते समय दसलाख रुपया अपने इसी पुत्रको दे गया कि धर्मके काममें खर्च करना । यद्यपि उसके और भी कई पुत्र

थे जो बुढ़ापेमें उन्हें छोड़कर, अलग–अलग जा बसे थे।

मनुष्यके मनमें सहानुभूतिकी माँग है। जो इस मनोविज्ञानको जानता है, वही व्यवहारमें निपुण होता है।

●●●